रामचरित्मानस

उत्तरकाण्ड

सप्तम सोपान-मंगलाचरण

श्लोक :
*** केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम्। पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं। नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढराममम्॥1।
भावार्थ:-
मोर के कण्ठ की आभा के समान (हरिताभ) नीलवर्ण, देवताओं में श्रेष्ठ, ब्राह्मण (भृगुजी) के चरणकमल के चिह्न से सुशोभित, शोभा से पूर्ण, पीताम्बरधारी, कमल नेत्र, सदा परम प्रसन्न, हाथों में बाण और धनुष धारण किए हुए वानर समूह से युक्त भाई लक्ष्मणजी से सेवित, स्तुति किए जाने योग्य, श्री जानकीजी के पति, रघुकुल श्रेष्ठ, पुष्पक विमान पर सवार श्री रामचंद्रजी को मैं निरंतर नमस्कार करता हूँ॥1॥
*** कोसलेन्द्रपदकन्जमंजुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ। जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृंगसंगिनौ॥2॥
भावार्थ:-
कोसलपुरी के स्वामी श्री रामचंद्रजी के सुंदर और कोमल दोनों चरणकमल ब्रह्माजी और शिवजी द्वारा वन्दित हैं, श्री जानकीजी के करकमलों से दुलराए हुए हैं और चिन्तन करने वाले के मन रूपी भौंरे के नित्य संगी हैं अर्थात् चिन्तन करने वालों का मन रूपी भ्रमर सदा उन चरणकमलों में बसा रहता है॥2॥
*** कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्। कारुणीककलकन्जलोचनं नौमि शंकरमनंगमोचनम्॥3॥
भावार्थ:-
कुन्द के फूल, चंद्रमा और शंख के समान सुंदर गौरवर्ण, जगज्जननी श्री पार्वतीजी के पति, वान्छित फल के देने वाले, (दुखियों पर सदा), दया करने वाले, सुंदर कमल के समान नेत्र वाले, कामदेव से छुड़ाने वाले (कल्याणकारी) श्री शंकरजी को मैं नमस्कार करता हूँ॥3॥

भरत विरह तथा भरत-हनुमान मिलन, अयोध्या में आनंद

दोहा :

*** रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग। जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृस तन राम बियोग॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के लौटने की अवधि का एक ही दिन बाकी रह गया, अतएव नगर के लोग बहुत आतुर (अधीर) हो रहे हैं। राम के वियोग में दुबले हुए स्त्री-पुरुष जहाँ-तहाँ सोच (विचार) कर रहे हैं (कि क्या बात है श्री रामजी क्यों नहीं आए)।

*** सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सब केर। प्रभु आगवन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर॥

भावार्थ:-

इतने में सब सुंदर शकुन होने लगे और सबके मन प्रसन्न हो गए। नगर भी चारों ओर से रमणीक हो गया। मानो ये सब के सब चिह्न प्रभु के (शुभ) आगमन को जना रहे हैं।

*** कौसल्यादि मातु सब मन अनंद अस होइ। आयउ प्रभु श्री अनुज जुत कहन चहत अब कोइ॥

भावार्थ:-

कौसल्या आदि सब माताओं के मन में ऐसा आनंद हो रहा है जैसे अभी कोई कहना ही चाहता है कि सीताजी और लक्ष्मणजी सहित प्रभु श्री रामचंद्रजी आ गए।

*** भरत नयन भुज दच्छिन फरकत बारहिं बार। जानि सगुन मन हरष अति लागे करन बिचार॥

भावार्थ:-

भरतजी की दाहिनी आँख और दाहिनी भुजा बार-बार फड़क रही है। इसे शुभ शकुन जानकर उनके मन में अत्यंत हर्ष हुआ और वे विचार करने लगे-

चौपाई :

*** रहेउ एक दिन अवधि अधारा। समुझत मन दुख भयउ अपारा॥ कारन कवन नाथ नहिं आयउ। जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायउ॥1॥

भावार्थ:-

प्राणों की आधार रूप अवधि का एक ही दिन शेष रह गया। यह सोचते ही भरतजी के मन में अपार दुःख हुआ। क्या कारण हुआ कि नाथ नहीं आए प्रभु ने कुटिल जानकर मुझे कहीं भुला तो नहीं दिया?॥1॥

*** अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पदारबिंदु अनुरागी॥ कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा। ताते नाथ संग नहिं लीन्हा॥2॥

भावार्थ:-

अहा हा! लक्ष्मण बड़े धन्य एवं बड़भागी हैं, जो श्री रामचंद्रजी के चरणारविन्द के प्रेमी हैं (अर्थात् उनसे अलग नहीं हुए)। मुझे तो प्रभु ने कपटी और कुटिल पहचान लिया, इसी से नाथ ने मुझे

साथ नहीं लिया॥2॥

*** जौं करनी समुझै प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कलप सत कोरी॥ जन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ॥3॥

भावार्थ:-

(बात भी ठीक ही है, क्योंकि) यदि प्रभु मेरी करनी पर ध्यान दें तो सौ करोड़ (असंख्य) कल्पों तक भी मेरा निस्तार (छुटकारा) नहीं हो सकता (परंतु आशा इतनी ही है कि), प्रभु सेवक का अवगुण कभी नहीं मानते। वे दीनबंधु हैं और अत्यंत ही कोमल स्वभाव के हैं॥3॥

*** मोरे जियँ भरोस दृढ़ सोई। मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई॥ बीतें अवधि रहहिं जौं प्राना। अधम कवन जग मोहि समाना॥4॥

भावार्थ:-

अतएव मेरे हृदय में ऐसा पक्का भरोसा है कि श्री रामजी अवश्य मिलेंगे, (क्योंकि) मुझे शकुन बड़े शुभ हो रहे हैं, किंतु अवधि बीत जाने पर यदि मेरे प्राण रह गए तो जगत् में मेरे समान नीच कौन होगा? ॥4॥

दोहा :

*** राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत। बिप्र रूप धरि पवनसुत आइ गयउ जनु पोत॥1क॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के विरह समुद्र में भरतजी का मन डूब रहा था, उसी समय पवनपुत्र हनुमान्‌जी ब्राह्मण का रूप धरकर इस प्रकार आ गए, मानो (उन्हें डूबने से बचाने के लिए) नाव आ गई हो॥1 (क)॥

*** बैठे देखि कुसासन जटा मुकुट कृस गात॥ राम राम रघुपति जपत स्रवत नयन जलजात॥1ख॥

भावार्थ:-

हनुमान्‌जी ने दुर्बल शरीर भरतजी को जटाओं का मुकुट बनाए, राम! राम! रघुपति! जपते और कमल के समान नेत्रों से (प्रेमाश्रुओं) का जल बहाते कुश के आसन पर बैठे देखा॥1 (ख)॥

चौपाई :

*** देखत हनूमान अति हरषेउ। पुलक गात लोचन जल बरषेउ॥ मन महँ बहुत भाँति सुख मानी। बोलेउ श्रवन सुधा सम बानी॥1॥

भावार्थ:-

उन्हें देखते ही हनुमान्‌जी अत्यंत हर्षित हुए। उनका शरीर पुलकित हो गया, नेत्रों से (प्रेमाश्रुओं का) जल बरसने लगा। मन में बहुत प्रकार से सुख मानकर वे कानों के लिए अमृत के समान वाणी बोले-॥1॥

*** जासु बिरहँ सोचहु दिन राती। रटहु निरंतर गुन गन पाँती॥ रघुकुल तिलकसुजन सुखदाता। आयउ कुसल देव मुनि त्राता॥2॥

भावार्थ:-

जिनके विरह में आप दिन-रात सोच करते (घुलते) रहते हैं और जिनके गुण समूहों की पंक्तियों को आप निरंतर रटते रहते हैं, वे ही रघुकुल के तिलक, सज्जनों को दुःख देने वाले और देवताओं तथा मुनियों के रक्षक श्री रामजी सकुशल आ गए॥2॥

*** रिपु रन जीति सुजस सुर गावत। सीता सहित अनुज प्रभु आवत॥ सुनत बचन बिसरे सब दूखा। तृषावंत जिमि पाइ पियूषा॥3॥

भावार्थ:-

शत्रु को रण में जीतकर सीताजी और लक्ष्मणजी सहित प्रभु आ रहे हैं, देवता उनका सुंदर यश गा रहे हैं। ये वचन सुनते ही (भरतजी को) सारे दुःख भूल गए। जैसे प्यासा आदमी अमृत पाकर प्यास के दुःख को भूल जाए॥3॥

*** को तुम्ह तात कहाँ ते आए। मोहि परम प्रिय बचन सुनाए॥ मारुत सुत मैं कपि हनुमाना। नामु मोर सुनु कृपानिधाना॥4॥

भावार्थ:-

(भरतजी ने पूछा-) हे तात! तुम कौन हो? और कहाँ से आए हो? (जो) तुमने मुझको (ये) परम प्रिय (अत्यंत आनंद देने वाले) वचन सुनाए। (हनुमान्‌जी ने कहा) हे कृपानिधान! सुनिए, मैं पवन का पुत्र और जाति का वानर हूँ, मेरा नाम हनुमान् है॥4॥

*** दीनबंधु रघुपति कर किंकर। सुनत भरत भेंटेउ उठि सादर॥ मिलत प्रेम नहिं हृदयँ समाता। नयन स्रवतजल पुलकित गाता॥5॥

भावार्थ:-

मैं दीनों के बंधु श्री रघुनाथजी का दास हूँ। यह सुनते ही भरतजी उठकर आदरपूर्वक हनुमान्‌जी से गले लगकर मिले। मिलते समय प्रेम हृदय में नहीं समाता। नेत्रों से (आनंद और प्रेम के आँसुओं का) जल बहने लगा और शरीर पुलकित हो गया॥5॥

*** कपि तव दरस सकल दुख बीते। मिले आजुमोहि राम पिरीते॥ बार बार बूझी कुसलाता। तो कहुँ देउँ काह सुन भ्राता॥6॥

भावार्थ:-

(भरतजी ने कहा-) हे हनुमान्- तुम्हारे दर्शन से मेरे समस्त दुःख समाप्त हो गए (दुःखों का अंत हो गया)। (तुम्हारे रूप में) आज मुझे प्यारे रामजी ही मिल गए। भरतजी ने बार-बार कुशल पूछी (और कहा-) हे भाई! सुनो, (इस शुभ संवाद के बदले में) तुम्हें क्या दूँ?॥6॥

*** एहि संदेस सरिस जग माहीं। करि बिचार देखेउँ कछु नाहीं॥ नाहिन तात उरिन मैं तोही। अब प्रभु चरित सुनावहु मोही॥7॥

भावार्थ:-

इस संदेश के समान (इसके बदले में देने लायक पदार्थ) जगत् में कुछ भी नहीं है, मैंने यह विचार कर देख लिया है। (इसलिए) हे तात! मैं तुमसे किसी प्रकार भी उऋण नहीं हो सकता। अब मुझे प्रभु का चरित्र (हाल) सुनाओ॥7॥

*** तब हनुमंत नाइ पद माथा। कहे सकल रघुपति गुन गाथा॥ कहु कपि कबहुँ कृपाल गोसाईं। सुमिरहिं मोहि दास की नाईं॥8॥

भावार्थ:-

तब हनुमान्‌जी ने भरतजी के चरणों में मस्तक नवाकर श्री रघुनाथजी की सारी गुणगाथा कही। (भरतजी ने पूछा-) हे हनुमान्! कहो, कृपालु स्वामी श्री रामचंद्रजी कभी मुझे अपने दास की तरह याद भी करते हैं?॥8॥

छंद :

*** निज दास ज्यों रघुबंसभूषन कबहुँ मम सुमिरन कर्‌यो। सुनि भरत बचन बिनीत अति कपि पुलकि तन चरनन्हि पर्‌यो॥ रघुबीर निज मुख जासु गुन गन कहत अग जग नाथ जो। काहे न होइ बिनीत परम पुनीत सदगुन सिंधु सो॥

भावार्थ:-

रघुवंश के भूषण श्री रामजी क्या कभी अपने दास की भाँति मेरा स्मरण करते रहे हैं? भरतजी के अत्यंत नम्र वचन सुनकर हनुमान्‌जी पुलकित शरीर होकर उनके चरणों पर गिर पड़े (और मन में विचारने लगे कि) जो चराचर के स्वामी हैं, वे श्री रघुवीर अपने श्रीमुख से जिनके गुणसमूहों का वर्णन करते हैं, वे भरतजी ऐसे विनम्र, परम पवित्र और सद्‌गुणों के समुद्र क्यों न हों?

दोहा :

*** राम प्रान प्रिय नाथ तुम्ह सत्य बचन मम तात। पुनि पुनि मिलत भरत सुनि हरष न हृदयँ समात॥2 क॥

भावार्थ:-

(हनुमान्‌जी ने कहा-) हे नाथ! आप श्री रामजी को प्राणों के समान प्रिय हैं, हे तात! मेरा वचन सत्य है। यह सुनकर भरतजी बार-बार मिलते हैं, हृदय में हर्ष समाता नहीं है॥2 (क)॥

सोरठा :

*** भरत चरन सिरु नाइ तुरित गयउ कपि राम पहिं। कही कुसल सब जाइ हरषि चलेउ प्रभु जान चढ़ि॥2 ख॥

भावार्थ:-

फिर भरतजी के चरणों में सिर नवाकर हनुमान्‌जी तुरंत ही श्री रामजी के पास (लौट) गए और जाकर उन्होंने सब कुशल कही। तब प्रभु हर्षित होकर विमान पर चढ़कर चले॥2 (ख)॥

चौपाई :

*** हरषि भरत कोसलपुर आए। समाचार सब गुरहि सुनाए॥ पुनि मंदिर महँ बात जनाई। आवत नगर कुसल रघुराई॥1॥

भावार्थ:-

इधर भरतजी भी हर्षित होकर अयोध्यापुरी में आए और उन्होंने गुरुजी को सब समाचार सुनाया! फिर राजमहल में खबर जनाई कि श्री रघुनाथजी कुशलपूर्वक नगर को आ रहे हैं॥1॥

*** सुनत सकल जननीं उठि धाईं। कहि प्रभु कुसल भरत समुझाईं॥ समाचार पुरबासिन्ह पाए। नर अरु नारि हरषि सब धाए॥2॥

भावार्थ:-

खबर सुनते ही सब माताएँ उठ दौड़ीं। भरतजी ने प्रभु की कुशल कहकर सबको समझाया। नगर निवासियों ने यह समाचार पाया, तो स्त्री-पुरुष सभी हर्षित होकर दौड़े॥2॥

*** दधि दुर्बा रोचन फल फूला। नव तुलसी दल मंगल मूला॥ भरि भरि हेम थार भामिनी। गावत चलिं सिंधुरगामिनी॥3॥

भावार्थ:-

(श्री रामजी के स्वागत के लिए) दही, दूब, गोरोचन, फल, फूल और मंगल के मूल नवीन तुलसीदल आदि वस्तुएँ सोने की थाली में भर-भरकर हथिनी की सी चाल वाली सौभाग्यवती स्त्रियाँ (उन्हें लेकर) गाती हुई चलीं॥3॥

*** जे जैसेहिं तैसेहिं उठि धावहिं। बाल बृद्ध कहँ संग न लावहिं॥ एक एकन्ह कहँ बूझहिं भाई। तुम्ह देखे दयाल रघुराई॥4॥

भावार्थ:-

जो जैसे हैं (जहाँ जिस दशा में हैं) वे वैसे ही (वहीं से उसी दशा में) उठ दौड़ते हैं। (देर हो जाने के डर से) बालकों और बूढ़ों को कोई साथ नहीं लाते। एक-दूसरे से पूछते हैं- भाई! तुमने दयालु श्री रघुनाथजी को देखा है?॥4॥

*** अवधपुरी प्रभु आवत जानी। भई सकल सोभा कै खानी॥ बहइ सुहावन त्रिबिध समीरा। भइ सरजू अति निर्मल नीरा॥5॥

भावार्थ:-

प्रभु को आते जानकर अवधपुरी संपूर्ण शोभाओं की खान हो गई। तीनों प्रकार की सुंदर वायु बहने लगी। सरयूजी अति निर्मल जल वाली हो गईं। (अर्थात् सरयूजी का जल अत्यंत निर्मल हो गया)॥5॥

दोहा :

*** हरषित गुर परिजन अनुज भूसुर बृंद समेत। चले भरत मन प्रेम अति सन्मुख कृपानिकेत॥B क॥

भावार्थ:-

गुरु वशिष्ठजी, कुटुम्बी, छोटे भाई शत्रुघ्न तथा ब्राह्मणों के समूह के साथ हर्षित होकर भरतजी अत्यंत प्रेमपूर्ण मन से कृपाधाम श्री रामजी के सामने अर्थात् उनकी अगवानी के लिए चले॥3 (क)॥

*** बहुतक चढ़ीं अटारिन्ह निरखहिं गगन बिमान। देखि मधुर सुर हरषित करहिं सुमंगल गान॥3 ख॥

भावार्थ:-

बहुत सी स्त्रियाँ अटारियों पर चढ़ीं आकाश में विमान देख रही हैं और उसे देखकर हर्षित होकर मीठे स्वर से सुंदर मंगल गीत गा रही हैं॥3 (ख)॥

*** राका ससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरषान। बढ़्यो कोलाहल करत जनु नारि तरंग समान॥3 ग॥

भावार्थ:-

श्री रघुनाथजी पूर्णिमा के चंद्रमा हैं तथा अवधपुर समुद्र है जो उस पूर्णचंद्र को देखकर हर्षित हो रहा है और शोर करता हुआ बढ़ रहा है (इधर-उधर दौड़ती हुई) स्त्रियाँ उसकी तरंगों के समान लगती हैं॥3 (ग)॥

चौपाई :

*** इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर। कपिन्ह देखावत नगर मनोहर॥ सुनु कपीस अंगद लंकेसा। पावन पुरी रुचिर यह देसा॥1॥

भावार्थ:-

यहाँ (विमान पर से) सूर्य कुल रूपी कमल को प्रफुल्लित करने वाले सूर्य श्री रामजी वानरों को मनोहर नगर दिखला रहे हैं। (वे कहते हैं-) हे सुग्रीव! हे अंगद! हे लंकापति विभीषण! सुनो। यह पुरी पवित्र है और यह देश सुंदर है॥1॥

*** जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना॥ अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ॥2॥

भावार्थ:-

यद्यपि सबने वैकुण्ठ की बड़ाई की है- यह वेद-पुराणों में प्रसिद्ध है और जगत् जानता है, परंतु अवधपुरी के समान मुझे वह भी प्रिय नहीं है। यह बात (भेद) कई-कोई (बिरले ही) जानते हैं॥2॥

*** जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि॥ जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा॥3॥

भावार्थ:-

यह सुहावनी पुरी मेरी जन्मभूमि है। इसके उत्तर दिशा में जीवों को पवित्र करने वाली सरयू नदी बहती है, जिसमें स्नान करने से मनुष्य बिना ही परिश्रम मेरे समीप निवास (सामीप्य मुक्ति) पा जाते हैं॥3॥

*** अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुख रासी॥ हरषे सब कपि सुनि प्रभु बानी। धन्य अवध जो राम बखानी॥4॥

भावार्थ:-

यहाँ के निवासी मुझे बहुत ही प्रिय हैं। यह पुरी सुख की राशि और मेरे परमधाम को देने वाली है। प्रभु की वाणी सुनकर सब वानर हर्षित हुए (और कहने लगे कि) जिस अवध की स्वयं श्री रामजी ने बड़ाई की, वह (अवश्य ही) धन्य है॥4॥ ***अगला पेज...***